ISSN No. 2349-4654
नाद - नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूज़िक
वर्ष : 1, अंक : 2, दिसम्बर 2014

पंजाब की लोकनाट्य शैली - सांग

डॉ. सिम्मी
सीनियर असिस्टेंट प्रोफेसर, नृत्य विभाग, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला

सार-संक्षेप

सांग उत्तर भारत के कई राज्यों में प्रचलित है। पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश में तो इसकी एक दीर्घकालिक परम्परा रही है। पंजाब में तो इसका सम्बन्ध हड़प्पा से जोड़ा जाता है। जिससे इसकी प्राचीनता का पता चलता है। वर्तमान में जिस प्रकार के सांग प्रचलित हैं उसका ऐतिहासिक काल 10वीं से 11वीं शताब्दी माना जाता है। जब पंजाब में मुस्लिम आक्रान्ता आए और वहीं बस गए। प्रस्तुत शोध पत्र में इसकी ऐतिहासिकता का वर्णन किया गया है तथा यह भी बतलाने का प्रयास किया गया है कि सांग के कितने प्रकार होते हैं। इस पत्र का मूल उद्देश्य यह है कि इस विधा को किस प्रकार पुनर्जीवित किया जाए तथा यह भी चिन्ता प्रकट की गई है कि इसकी दीर्घकालिक परम्परा को नष्ट न होने दिया जाए और ऐसे कौन से प्रयास किए जाए जिससे इस कला को पुनर्जीवित किया जा सके। यह शोध पत्र यू.जी.सी. के मेजर रिसर्च प्रोजक्ट शीर्षक 'पंजाब की लोकनाट्य शैली सांग को पुन: प्रचलित करने हेतु शोध परियोजना' को आधार मानकर लिखा गया है। इस प्रोजक्ट को करते समय पंजाब के विभिन्न स्थलों पर जाकर कई प्रमाणिक सूचना एकत्रित की गईं तथा कई प्रसिद्ध लेखकों की पुस्तकों से प्राप्त तथ्यों को भी आधार बनाया गया है।

शोध-पत्र

आम अर्थों में 'सांग' किसी का वेश रूप अथवा नकल करने को कहते हैं। पंजाब में लोकनाट्य शैलियों के नाम पर सांग जैसी लोक नाट्य शैली का नाम विशेष रूप से प्रसिद्ध रहा है। यह पंजाब की प्राचीनतम लोक नाट्य शैली है, इसमें किसी भी कथा अथवा कहानी को अभिनय, नृत्य और संगीत द्वारा पेश किया जाता है।

सांग शब्द संस्कृत के 'स्वांग' शब्द से बना है। फारसी में इस शब्द को 'नक़ल' कहा जाता है, जिसका अर्थ किसी अन्य व्यक्ति का रूप धरण करना या किसी अन्य व्यक्ति जैसा क्रियाकलाप करना है।[1]

पंजाब में सांग नाट्य परम्परा का संबंध हड़प्पा संस्कृति से जोड़ा जाता है। पंजाबी साहित्य में भी सांग का जिक्र आता है। 'गुरु नानक देव' जी की वाणी में उन्होंने अपने आप को परमात्मा का सांगी कहा है। उन्होंने ये भी बताया कि पंजाब में सांग की परम्परा मुग़ल काल से पहले आरम्भ हो चुकी थी। पंजाब के साहित्य में सांग के कई और नामों का वर्णन मिलता है जैसे—खेल, तमाशा, नौटंकी, रासधरी इत्यादि। परन्तु प्राचीन काल से ही सांग शब्द आम लोगों और साहित्य में अधिक प्रचलित रहा है। पंजाब में कई तरह के एतिहासिक सांग नाट्य लिखे और खेले जा चुके हैं। सांग लेखकों में 'हश्मत शाह चिश्ती' विशेष रूप से प्रसिद्ध रहे हैं। पंजाब में सांग नाट्य के सर्वप्रथम रूप 'सर रिचर्ड टेम्पल' की पुस्तक 'लिजैण्ड्स ऑफ पंजाब' में मिलते हैं। यह पुस्तक सन् 1884 में छपी थी। मौजूदा प्रकार की पंजाबी सांग परम्परा 10वीं, 11वीं सदी में प्रचलित हुई। यह वह समय था जब मुसलमान पंजाब में आए। महमूद गज़नवी के हमले के पश्चात् मुसलमान पंजाब में ही बस गए। इसके साथ ईरान के कुछ पेशेवर 'नक्काल' अथवा 'तमाशाई' टोले भी आए थे। ईरान में इन टोलों को 'मतसिली-मज़लशी' कहा जाता था। इन मज़लशों ने ईरानी और पंजाबी लोक कहानियों को अपने तमाशों का आधर बनाकर गांव-गांव जाकर सांग नाट्य खेलने आरम्भ कर दिए। इन मुसलमानों द्वारा खेले जाने वाले सांग नाट्यों के साथ रासधरियों की सांग नाट्य परम्परा भी चलती रही। इस तरह सांग नाट्य की दो परम्पराएं बन गई—धार्मिक व लौकिक। धार्मिक सांग नाट्य परम्परा को 'रासधरी सांग नाट्य परम्परा' कहा जाने लगा और लौकिक सांग परम्परा को 'नौटंकी सांग' परम्परा का नाम दिया गया।[2] 'नूर इलाही' और 'मोहम्मद उमर मजलशी' इन कंपनियों के बारे में इस प्रकार बताते हैं कि—इस प्रकार के किस्सों का प्रस्तुतिकरण ईरान में खुशी के मौकों पर किया जाता था। इसमें गद्यो और पद्यो को वाद्यों के साथ गाया जाता था। तमसील मज़लशी की पूरी एक कम्पनी होती थी जिसमें कलाकार बिना किसी विशेष पोशाक, दृश्यचित्रण, पर्दे आदि प्रस्तुति कर दिया करते थे।[3]

सांग करने वाले कलाकारों को सांगी, तमाशागर, भांड, नकलीए आदि नामों से जाना जाता था। सांग करने वाले समाज के निम्नवर्ग से संबंधित

होते थे। उस समय ये लोग डूमीहीन वर्ग से संबंधित होते थे। जिनकी रोज़ी-रोटी ही लोगों का मनोरंजन करना था। पंजाब में एक अन्य जाति जिसे 'झिवर' (झीर) कहा जाता था। वह भी सांग की प्रस्तुतियां अथवा खेल किया करते थे। पंजाब में सांग के मुख्य रूप से निम्नलिखित 'उपरूप' पाये जाते हैं— (1) चौबोले (2) खिउड़े (3) मूक सांग नाटक

(1) **चैबोले**—इसमें किसी बड़ी कहानी की किसी बड़ी घटना को नृत्य, संगीत तथा अभिनय के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इसमें वार्तालाप काव्यात्मक होते हैं। पंजाब में विवाह-शादी के मौके पर 'मरासी' या 'भांड' इसे प्रस्तुत करते हैं।

(2) **खिउड़े**—आज पंजाब में प्राय: यह लुप्त सा हो चुका है। यह पंजाब में शादी के मौके पर किया जाने वाला सांग नाट्य हैं वर पक्ष जब अपनी बरात के साथ लड़की वालों के घर खाने के लिए बैठ जाता है और घर के पुरुष बारात की खातिरदारी में लग होते हैं तो वधुपक्ष की औरतें सिठ्ठनियां गाने लगती हैं—

लाडेया नठ्ठ जा वे मुण्डे भैणां मंगदे
मुड़के पैरी पै जा वे मुण्डे छड्डु जाणगे।
बापु वे पिण्ड दे लागी आये।
सोहरीदिया चुप वे गढुप्प पल्ल पैसा वी है ना
बापु वे अम्मा गहणे धरिए
सोहरीदिया चुप वे गढुप्प किसे लैणी वी है ना।

गीत संगीतबद्ध नाटकीय प्रदर्शन आरम्भ होने के पश्चात् स्वांग का दौर आरम्भ हो जाता है। इसमें औरतें देवी-देवताओं का सांग अथवा रूप धारण करके घर की छत से एक एक करके उतरती हैं। उनका लीडर या रंगा ''मै वारी जावां'' कहता हुआ सब से आगे चलता है। सांग के पात्र अपने आप को स्वर्ग से आये बताते हैं और वर के पिता को पकड़ लेते हैं व उन्हें कहते हैं कि वह स्वर्ग से एक गड़वी उठाकर ले आया है। यहां से उनका वार्तालाप आरम्भ हो जाता है। सारा स्वांग पूर्ण रूप से चमत्कारिक और नाटकीय प्रभाव वाला होता है। दर्शक व बाराती दंग रह जाते हैं। स्वांग की कथा वस्तु व गीत (सिठ्ठणीयां) पहले से निश्चित की गई होती हैं—

कारी थोड़ेयां दिनां दी
रोटी पानी खाणी नहीं लड्डुआं नूं मारदी ऐ लप्पे गडप्पे
गुरु पत्त रखू कारी थोड़ेयां दिनां दी

कई गांवों में खिउडे चांदनी रातों में घर की छत्तों पर दो ग्रुपों के अदाकारी के मुकाबले के रूप में खेले जाते थे। मोला बक्श कुश्ता अपनी पुस्तक में खिउड़े के बारे में बताते हैं कि विवाह-शादियों के समय में अलग-अलग दो घरों की छत्तों पर बैठ कर अदाकारी के सवाल-जवाब के रूप में पेशकारी चलती थी। पंजाब में इस का रिवाज़ 1892 से लेकर 1914 तक विशेष रूप से प्रचलित रहा। यह प्रदर्शन रात-रात भर चलता था। उस समय खिउड़े के मंच में लोक गायन शैली मुशायरे की तरह और सवाल-जवाब की तरह होती थी। उस समय खिउड़े में प्रसिद्ध गीत इस तरह गाया जाता था—

पुछ ना पैंदे मामले - वे मैं वारी आं
नेह ना लगदे ज़ोर - वे मैं वारी आं
आशक ते वरियाम नूं - वे मैं वारी आं
पई उडीके गोर - वे मैं वारी आं
आशक गल जंजीरीयां - वे मैं वारी आं
जिऊं लाटू गल डोर - वे मैं वारी आं
गोरी झूरे कुख नूं - वे मैं वारी आं
जिऊं पैरां नूं मोर - वे मैं वारी आं
बाझ परेमे आदमी - वे मैं वारी आं
जंगली चुगदे मोर - वे मैं वारी आं
उड्ड खां शामीं तोतेआ - वे मैं वारी आं
मैनूं राणी लिआदे होर - वे मैं वारी आं
मक्खी, मच्छी, स्त्री - वे मैं वारी आं
तिने जात कुज़ात - वे मैं वारी आं
जां वेखण सर सोहना - वे मैं वारी आं
तहां कटीवण रात - वे मैं वारी आं। [4]

(3) मूक सांग नाटक—सांग के इस नाटकीय स्वरूप में मूक अभिनय चलता है। पर्दे के पीछे से संगीत बजता है और आगे अभिनेता अपने मूक अभिनय द्वारा पेशकारी करता है। सांग नाटक का यह रूप 'मोनोएक्टिग' और 'हिस्ट्रोनिक्स' जैसा होता है।[6]

सांग के एक अन्य रुप का पंजाब की स्त्रियाँ अपने लोकनृत्य गिद्दे में प्रयोग करती हैं। इसमें नृत्य के साथ चल रही बोलीयों के आधार पर वे अलग-अलग पात्रों का अभिनय करती हैं। कभी सूदखोर बाणीयां, कभी हलवाई, कभी सास और कभी बहू अथवा जेठ आदि का सांग (नकल) लगाती हैं।

पंजाब के सांग में गद्यमय बंदों का और काव्यमय पदों में गायन किया जाता है। इसमें दादरा, कहरवा या तीन ताल आदि तालों तथा उन्हीं के लोक प्रकारों का प्रयोग होता है। भैरवी, भैरव, भुपाली, आसावरी, टोडी, जै-जैवंती, कल्याण, देस, चंद्रकौंस और मालकौंस आदि रागों का प्रयोग किया जाता है। वार्तालाप के रूप में लम्बी प्रश्नलड़ी सी चलती है। संवाद तीखे स्पष्ट और तीखे स्वरों की गायकी होती है। संवादों में कई बार अश्लील शब्दों का प्रयोग भी होता है। संगत के लिए घड़ा, ढ़ोलकी, हरमोनियम, सारंगी, बाज, नफीरी, नगाड़ा, बींन, छैने, शहनाई आदि लोक वाद्यों का प्रयोग किया जाता है।[6]

सांग में पुरुष कलाकार ही स्त्री पात्रों की भूमिका अदा करते हैं। उनके

नृत्य में स्त्री नर्तकों की सी लोच-लचक व अदाएं होती है। मुख पर स्त्रियों वाला गहरा मेकअप घाघरा, कुर्ती अथवा कमीज सलवार और रंग बिरंगा दुपट्टे पहनती हैं। सांग में राजा हरीशचन्द्र, हीर-रांझा, सस्सी-पुन्नू, चंचल रानी, पृथ्वीराज चौहान, पूरन भगत, रूप बसन्त, रानी कोकला आदि के कथानक और कहानियों का प्रयोग किया जाता है।[7] सांग की प्रस्तुति के लिए किसी विशेष रंगमंच की आवश्यकता नहीं होती। गांव में किसी भी खुली खाली पड़ी जगह पर इसका अखाड़ा लगा दिया जाता है। इसका रंगमंच कमानी होता है। किसी विशेष मंच सामग्री या रोशनी प्रभाव की आवश्यकता नहीं होती। पुराने समय में रात में होने वाले प्रदर्शन में दो पुरुष हाथ में मशाले लेकर मंच के दाएं-बाएं खड़े होते थे। चलते हुए प्रदर्शन में दर्शक जब चाहे कलाकार की प्रस्तुति से खुश होकर और हौंसला अफ़ज़ाई के लिए पैसे दे सकते हैं। इसे 'वेल' कहा जाता है। इनाम मिलने पर नाटक को रोककर इनाम देने वाले की प्रशंसा की जाती है। सांग में एक विशेष हँसी वाला पात्र होता है जो अपने हास्यरस भरपूर प्रदर्शन से दर्शकों को हंसा-हंसा कर लोट-पोट करता है।

पंजाब में किसी समय में रात-रात भर सांग की प्रस्तुतियां हुआ करती थीं। सारा गांव इकट्ठा होकर इस प्रस्तुति को देखने के लिए उमड़ पड़ता था। पंजाब के दोआबा इलाके में इस तरह की प्रस्तुतियां विशेष रूप से हुआ करती थीं, परन्तु आतंकवाद के समय में होशियारपुर के गांव 'काहरी साहरी' में हुए गोलीकांड के पश्चात् इस तरह की प्रस्तुतियां बंद करवा दी गई। इस के पश्चात् पंजाब में सांग की प्रस्तुतियों को मानो नज़र ही लग गई। बदलते समय के परिवेश ने और सिनेमा तथा टी.वी. ने इन्हें और अधिक क्षति पहुँचायी और यह वस्तुत: खत्म ही हो गए। इसके कलाकार भूखे मरने लगे। गांव के लोगों की बदलती रुचि और व्यस्तता ने सांग के स्वरुप को ही बदल दिया। इसके कलाकारों ने अपना पेशा बदल लिया। कोई मज़दूरी करने लगा तो कोई गांव में लिपाई-पुताई का कार्य करने लगा। यहां तक कि इन कलाकारों की नई पीढ़ी ने अपना पुश्तैनी काम करने से कतई मना कर दिया। जो पुरुष स्त्री पात्र की भूमिका निभाते हुए सांग में नृत्य करते थे उन्हें गांव के लड़कों ने तंग करना आरम्भ कर दिया था। न ही उन की कला को कोई रंगमंच मिलता था और न ही सराहना। यहां तक कि उन्हें मिले सम्मान और समृति चिन्हों पर भी ढेरों मिट्टी जम चुकी थी। परन्तु आज भी उन की आँखों और चेहरे पर पड़ी झुर्रियों में पंजाब की इस लोकनाट्य शैली को फिर से आम लोगों में प्रस्तुत होते देखने की इच्छा साफ दिखाई पड़ती है। यह सुनकर कि इस लोकनाट्य शैली को पुन: प्रचलित करने के लिए कोई शोधकार्य किया जा रहा है उन की खुशी का ठिकाना न रहा। उन की उम्मीद और आशीर्वाद नि:संदेह शोधकार्य के साथ है।[8]

पाद-टिप्पणियाँ

1. बख्शीश सिंह, पंजाब दी लोक नाट परम्परा (शोध-पत्रिका, नाटक विशेष अंक 25, मार्च 1985), पृ. 29
2. चौथी पंजाबी विकास कान्फ्रैंस, ओलख, अजीत सिंह, पंजाब विच संगीत, नाट अते चित्रकला, पृ. 104-105
3. फुल्ल, गुरदयाल सिंह, पंजाबी नाटक : सरुप, सिद्धांत ते विकास, पृ. 195
4. कुश्ता अमृतसरी, पंजाब दे हीरे, पृ. 51-52
5. अग्रवाल, राम नारायण, संगीत : एक लोक नाट्य परंपरा, पृ. 183
6. दीप, कुलदीप सिंह, भारत दी संगीत नाटकी परंपरा, पृ. 25-26
7. वही
8. यू.जी.सी मेज़र रिसर्च प्रोजेक्ट के फील्डवर्क सर्वे के दौरान मिली जानकारी के आधार पर।

संदर्भ ग्रन्थ-सूची

बख्शीश सिंह, पंजाब दी लोक नाट परम्परा (शोध-पत्रिका, नाटक विशेष अंक 25, मार्च 1985), पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला

चौथी पंजाबी विकास कान्फ्रैंस, ओलख, अजीत सिंह, पंजाब विच संगीत, नाट अते चित्रकला, पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला, 1989

फुल्ल, गुरदयाल सिंह, पंजाबी नाटक : सरुप, सिद्धांत ते विकास, पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला, 1988

कुश्ता अमृतसरी, पंजाब दे हीरे, लोकगीत प्रकाशन, सरहिंद, 1996

अग्रवाल, राम नारायण, संगीत : एक लोक नाट्य परंपरा, राजपाल एण्ड सन्ज़, नई दिल्ली, 1976

दीप, कुलदीप सिंह, भारत दी संगीत नाटकी परंपरा, चेतना प्रकाशन, लुधियाना, 2008

वही

यू.जी.सी मेज़र रिसर्च प्रोजेक्ट के फील्डवर्क सर्वे के दौरान मिली जानकारी के आधार पर।